# वैदिक वर्ण और स्वर

## वर्ण

वैदिक व्याकरण में १३ स्वर तथा ३९ व्यञ्जन वर्णों को मिलाकर कुल ५२ ध्वनियाँ हैं जिन्हें निम्न सारणी में समग्रित रूप से देखा जा सकता है—

**स्वर—**

| | |
|---|---|
| (क) समानाक्षर—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ | = ०९ |
| (ख) सन्ध्यक्षर—ए, ओ, ऐ, औ | = ०४ |

**व्यञ्जन—**

| | |
|---|---|
| (क) स्पर्श—क से म तक | = २५ |
| (ख) अन्तस्थ—य, र, ल, व | = ०४ |
| (ग) सोष्म—श, ष, स, ह | = ०४ |
| (ध) अनुस्वार—विसर्ग | = ०२ |
| (ङ) जिह्वामूलीय—उपध्मानीय | = ०२ |
| योग | = ५० |
| + ळ तथा ळ्ह | = ०२ |

**ळ् तथा ळ्ह्**—लौकिक संस्कृत के व्यञ्जनों के अतिरिक्त वैदिक संस्कृत में ये दो व्यवञ्जन अधिक होते हैं। दो स्वरों के बीच में आने पर डकार को ळकार हो जाता है (द्वयोश्चास्य स्वरयोर्मध्यमेत्य, सम्पद्यते स डकारो ळकारः)। यदि वही 'ड्' 'ह्' के साथ आवे तो 'ळ्ह' हो जाता है (ळ्हकारतामेति स एव चास्य डकार सन्नूष्मणा संप्रयुक्तः)।

## स्वर

## (Accent)

स्वर वैदिक भाषा की प्रमुख विशेषता है। वेद के अध्ययन में स्वर शास्त्र की अप्रतिम महत्ता है। 'स्वर' शब्द स्वृ धातु से घ प्रत्यय लगाकर निष्पन्न होता है। निघण्टु में स्वर पद गत्यर्थक आख्यातों में पठित है। अतः स्वर शब्द का निर्वचन होगा—

स्वर्यन्तेऽर्था एभिः अर्थात् इससे पदों के अर्थ जाने जाते हैं।

Scanned with CamScanner

**अन्धकारे दीपिकाभिर्गच्छन्न स्खलति क्वचित्।**
**एवं स्वरैः प्रणीतानां भवन्त्यर्थाः स्फुटा इति॥**

ये स्वर (accent) अच् अर्थात् स्वर (Wovel) के ही धर्म हैं। ये मुख्य रूप से ३ हैं उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित। उदात्तश्चानुदात्तश्च स्वरितश्च त्रयः स्वराः आयामविश्रम्भाक्षेपैस्त उच्यन्ते।

## उदात्त
## (Acute)

'उदात्त' शब्द 'उत्' तथा 'आ' पूर्वक 'दा' धातु में 'क्त' प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुआ है। इस प्रकार 'उदात्त' का शाब्दिक अर्थ है—ऊपर उठाकर ग्रहण किया हुआ।

उच्चैरादीयते इति उदात्तः अर्थात् उच्च स्वर से जिसका ग्रहण अर्थात् उच्चारण होता है वह उदात्त है। वायु के कारण उच्चारणावयवों के ऊपर जाने को 'आयाम' कहते हैं। उस आयाम से जो उच्चारित होता है वह उदात्त है। आयामो नामूर्ध्वगमनं गात्राणां वायुनिमित्तम्। जिन स्वरों के उच्चारण में गात्रों का आरोह हो अर्थात् उच्चारणावयव ऊपर की ओर खिंच जाते हैं उन्हें उदात्त कहते हैं। लघु सिद्धान्त कौमुदी के अनुसार—

उच्चैरुदात्तः अर्थात् ताल्वादिषु सभागेषु स्थानेषूर्ध्वभागे निष्पन्नोऽजुदात्त-सञ्ज्ञः स्यात्!

कण्ठ तालु आदि सखण्ड स्थानों के ऊपर के भाग से जिस अच् की उत्पत्ति होती है उसको उदात्त कहते हैं। वैदिक ग्रन्थों में इनकी पहचान के लिए चिह्न लगे होते हैं जोकि सभी ग्रन्थों में समान नहीं है। ऋग्वेद में उदात्त पर कोई भी चिह्न नहीं लगाया जाता।

## अनुदात्त
## (Grave)

'अनुदात्त' शब्द अन् उत् तथा आ पूर्वक दा धातु में क्त प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुआ है, जिसका व्युत्पत्ति-लभ्य शाब्दिक अर्थ है—ऊपर उठाकर न ग्रहण किया हुआ—

नीचैरादीयते इत्यनुदात्तः अर्थात् उच्चारण अवयवों के नीचे जाने से जिस स्वर का ग्रहण अर्थात् उच्चारण होता है वह अनुदात्त कहलाता है। ऋग्वेद में 'अनुदात्त' के नीचे एक पड़ी रेखा (च॒) लगायी जाती है।

ऋक् प्रातिशाख्य के अनुसार अनुदात्त का उच्चारण 'विश्रम्भ' से होता है—

विश्रम्भो नामाधोगमनं गात्राणां वायुनिमित्तम्। अर्थात् वायु के कारण उच्चारणावयवों के नीचे जानें को विश्रम्भ कहते हैं उस विश्रम्भ से जो उच्चारित होता है वह अनुदात्त है।

पाणिनि के अनुसार—नीचैरनुदात्तः अर्थात् ताल्वादिषु सभागेषु स्थानेष्वधो भागे निष्पन्नोऽच् अनुदात्त-सञ्ज्ञः स्यात्" अर्थात्—कण्ठ तालु आदि सखण्ड स्थानों के नीचे भाग से जिस अच् का उच्चारण होता है वह अनुदात्त होता है। अतः अनुदात्त स्वर के उच्चारण में गात्रों का अवरोह होता है।

Scanned with CamScanner

अनुदात्त स्वर संहिता में उदात्त से प्रभावित होता रहता है। नियमतः उदात्त से परे रहने वाला अनुदात्त वर्ण स्वरित हो जाता है यदि उसके परे कोई उदात्त या स्वरित न हो। इस अनुदात्त के स्वरित हो जाने पर परवर्ती उदात्त के पूर्व के समस्त अनुदात्त वर्ण प्रचय हो जाते हैं।

## स्वरित
## (Circumflex)

'स्वरित' शब्द ध्वनि-अर्थक स्वृ धातु से निष्पन्न हुआ है। स्वरित का शाब्दिक अर्थ है ध्वनित या उच्चारित।

"स्वरः सञ्जातः यस्मिन् सः स्वरितः अर्थात् स्वर उत्पन्न किया जाता है जिसमें वह स्वरित होता है।

ऋक् प्रातिशाख्य के अनुसार एकाक्षरसमावेशे पूर्वयोः स्वरितः स्वरः"

अर्थात् "पूर्व वाले दो (उदात्त और अनुदात्त) का एक अक्षर में समाहार अर्थात् समावेश होने पर स्वरित स्वर निष्पन्न होता है। स्वरित में उदात्त और अनुदात्त दोनों स्वरों के गुणों का मेल होता है। ऋग्वेद में 'स्वरित' के सिर पर एक खड़ी रेखा लगायी जाती है; जैसे स्वः।

ऋक्प्रातिशाख्य के अनुसार स्वरित का उच्चारण आक्षेप से होता है—

"आक्षेपो नाम तिर्यग्गमनं गात्राणां वायु-निमित्तम्" अर्थात् वायु के कारण उच्चारण-अवयवों के तिरछा जाने को आक्षेप कहते हैं उस आक्षेप से जो उच्चारित होता है वह स्वरित है।

स्वरित का उच्चारण ध्वनि के आरोह तथा अवरोह से होता है। स्वरित के उदात्तांश के उच्चारण में ध्वनि का आरोह एवं अनुदात्त अंश के उच्चारण में अवरोह होता है।

स्वरित की आधी मात्रा अथवा सम्पूर्ण स्वरित का आधा भाग उदात्त से उच्चतर उच्चारित होता है। स्वरित का परवर्ती अवशिष्ट अनुदात्त अंश उदात्त के समान सुना जाता है यदि उस स्वरित के बाद में विद्यमान अक्षर उदात्त अथवा स्वरित उच्चारित न हो यतोहि—

**तस्योदात्ततरोदात्तादर्धमात्रार्धमेव वा।**
**अनुदात्तः परः शेषः स उदात्तश्रुति न चेत्॥**
**उदात्तं वोच्यते किञ्चित् स्वरितं वा अक्षरं परम्॥**

पाणिनीय व्याकरण में इसे उदात्तादनुदात्तस्य स्वरितः कहकर परिभाषित किया गया है।

स्वरित में उदात्त एवं अनुदात्त का मिश्रण तिल-तण्डुल अथवा काष्ठ-जन्तु के समिश्रण के सदृश होता है अर्थात् स्वरित में उदात्त तथा अनुदात्त धर्मों का समिश्रण सभी अवयवों में समान रूप से नहीं होता। स्वरित के आदि भाग में उदात्त धर्म रहता है और बाद वाले आधे भाग में अनुदात्त धर्म रहता है।

इसीलिए व्याकरण के अनुसार—समाहारः स्वरितः अर्थात् उदात्तानुदात्तत्वे वर्ण-धर्मौ समाह्रियते यत्र सोऽच् स्वरित्-सञ्ज्ञः स्यात्।

Scanned with CamScanner

उदात्तत्व एवं अनुदात्तत्व दोनों वर्णों का मेल जिस वर्ण में हो वह स्वरित होता है। अर्थात् तालु आदि स्थानों के मध्य भाग में जिस अच् का उच्चारण होता है उसे स्वरित कहते हैं। स्वरित के कई भेद होते हैं जिन्हें निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है—

**स्वरित**

- उदात्तपूर्व
  - १. वैवृत्त
  - २. तैरोव्यञ्जन
  - ३. तैरोऽवग्रह
- जात्य
  - १. अपूर्व
  - २. नीचपूर्व
- सन्धिज
  - १. प्रश्लिष्ट
  - २. क्षैप्र
  - ३. अभिनिहित

## १. उदात्तपूर्व स्वरित

उदात्त से परे रहने वाला अनुदात्त जब स्वरित हो जाता है तब उस स्वरित को उदात्त पूर्व, सामान्य, परतन्त्र स्वरित आदि नामों से अभिहित किया जाता है।

उदात्तपूर्वं स्वरितमनुदात्तं पदेऽक्षरम् अर्थात् वह स्वरित स्वभाव से अनुदात्त ही होता है, पूर्ववर्ती उदात्त के प्रभाव से यह स्वरित हो जाता है। परिस्थितिवश पूर्ववर्ती उदात्त के हट जाने पर यह स्वरित अपने मूल रूप 'अनुदात्त' में ही परिवर्तित हो जाता है। इसके तीन उपभाग है—

**(क) वैवृत्त स्वरित**—संहिता में दो स्वर-वर्णों के उच्चारण के मध्य में विद्यमान काल के व्यवधान को विवृत्ति कहते हैं—स्वरान्तरं तु विवृत्तिः।

ऐसे स्थानों में पदान्त उदात्त स्वर के परे जहाँ पदादि अनुदात्त स्वरित हो जाता है उसे वैवृत्त स्वरित कहते हैं यथा—यः। इन्द्र। सोमोऽपातमः = य इन्द्र सोम पातमः॥

**(ख) तैरोव्यञ्जन स्वरित**—जहाँ व्यञ्जन का व्यवधान होने पर भी पूर्ववर्ती उदात्त के कारण परवर्ती अनुदात्त स्वरित हो जाता है तो उसे तैरोव्यञ्जन स्वरित कहते हैं। इसे व्यञ्जनव्यवहित स्वरित भी कहते हैं—

तिरोऽन्तर्धानं व्यञ्जनं यस्येति तैरोव्यञ्जनम्।

जैसे—अग्निम् ईळे = अग्निमीळे।

**(ग) तैरोऽवग्रह स्वरित**—जब पूर्ववर्ती उदात्त और परवर्ती अनुदात्त के मध्य में अवग्रह से व्यवधान होने पर भी अनुदात्त स्वरित हो जाता है तब उसे तैरोऽवग्रह स्वरित कहा जाता है। यथा—उषःऽउष, गणऽपतिम्।

Scanned with CamScanner

## २. जात्यस्वरित

जात्यस्वरित का शाब्दिक अर्थ है स्वभाव से ही स्वरित अर्थात् उदात्त और अनुदा की संगति के विना जो स्वरित उत्पन्न होता है उसे जात्य स्वरित कहते हैं। इसे स्वतन्त्र स्वरि भी कहते हैं।

अतोऽन्यत्स्वरितं स्वारं जात्यमाचक्षते पदे। अर्थात् एक पद में उदात्तपूर्व स्वरित अन्य जो स्वरित स्वर है उसे जात्यस्वरित कहते हैं अर्थात् पद में जिस स्वरित के पूर्व उदा नहीं होता है उसे जात्य स्वरित कहते हैं।

जात्य स्वरित सभी परिस्थितियों में स्वरित रहता है अर्थात् यह कभी-भी अनुदात्त के रूप में दिखलायी नहीं पड़ता इसीलिए इसे नित्य स्वरित भी कहते हैं।

जात्य स्वरित प्रायः य अथवा व में अन्त होने वाले संयुक्त वर्ण के बाद वाले स्व वर्ण पर आता है। दूसरे शब्दों में प्रायः एक ही पद में क्षैप्र सन्धि से जायमान स्वरित जात्य स्वरित होता है। यह दो प्रकार का होता है—

**(क) अपूर्व जात्यस्वरित**—जिस जात्य स्वरित के पूर्व में कोई भी स्वर नहीं होता है उसे अपूर्व जात्य स्वरित कहते हैं यथा—स्वः, क्वः न्यक् आदि।

**(ख) नीच-पूर्व जात्यस्वरित**—जिस जात्यस्वरित के पूर्व में अनुदात्त स्वर होता है, वह नीच-पूर्व जात्य स्वरित है। यथा—

कन्या, हृदय्या आदि।

## ३. सन्धिज स्वरित

जहाँ दो अक्षरों की सन्धि के साथ-साथ अक्षरों के धर्म-भूत स्वरों की भी सन्धि होती है और वह संध्य स्वर स्वरित होता है तो उस स्वरित को सन्धिज के नाम से अभिहित किया जाता है। ये तीन हैं—

**(क) प्रश्लिष्ट स्वरित**—पाणिनीय व्याकरण की दीर्घ गुण और वृद्धि संधियों को ऋक् प्रातिशाख्य में प्रश्लिष्ट संधि कहा गया है। इसी प्रश्लिष्ट संधि के कारण होने वाला स्वरित 'प्रश्लिष्ट' स्वर कहा जाता है—

उदात्तवत्येकीभावं उदात्तं संध्यक्षरम्

अर्थात् प्रश्लिष्ट संधि में एक ओर का स्वर वर्ण उदात्त होने पर संध्य स्वर वर्ण भी उदात्त होता है। किन्तु

**इकारयोश्च प्रश्लेषे क्षैप्राभिनिहितेषु च।**
**उदात्त-पूर्वरूपेषु शाकल्यस्यैवमाचरेत्॥**

दो ह्रस्व इकारों की प्रश्लिष्ट संधि में पदान्त उदात्त और पदादि अनुदात्त की संधि से सर्वदा स्वरित की निष्पत्ति होती है यथा स्रुचिऽइव। घृतम् = स्रुचीव घृतम्

**(ख) क्षैप्र स्वरित**—पाणिनीय व्याकरण की यण सन्धि ही क्षैप्र सन्धि है। क्षैप्र सन्धि के कारण होने वाला स्वरित क्षैप्र कहलाता है। क्षैप्र सन्धियों में उदात्तपूर्व में होने पर और अनुदात्त बाद में होने पर संध्य स्वर स्वरित होता है।

Scanned with CamScanner

अर्थात् जब क्षैप्र सन्धि में उदात्त विशिष्ट इ या ई तथा उ या ऊ के बाद में कोई असवर्ण स्वर होने पर क्रमशः य और व बन जाता है तब परवर्ती अनुदात्त विशिष्ट स्वर क्षैप्र सञ्ज्ञक स्वरित होता है। उदाहरणार्थ—नु। इन्द्र = न्विन्द्र।

(ग) **अभिनिहितस्वरित**—पाणिनीय व्याकरण की पूर्वरूप सन्धि ही अभिनिहित सन्धि है। अभिनिहित सन्धि के कारण होने वाला स्वरित अभिनिहित स्वरित कहलाता है।

ऋक् प्रातिशाख्य के अनुसार अभिनिहित सन्धियों में उदात्त पूर्व में होने पर अनुदात्त से की गयी सन्धि का सन्ध्य स्वर स्वरित होता है। अर्थात् जब पूर्ववर्ती उदात्त ए या ओ के साथ परवर्ती अनुदात्त अ का एकीभाव हो जाता है तब सन्ध्य स्वर अभिनिहित स्वरित होता है; यथा—ते। अवर्धन्त = तेऽवर्धन्त।

## प्रचय
## (Accumulation)

'प्रचय' शब्द प्र उपसर्ग पूर्वक चि धातु से निष्पन्न हुआ है प्रचय का अर्थ है आधिक्य। पूर्ववर्ती स्वरित के कारण एक से अधिक अनुदात्त प्रचय हो जाते हैं (जब तक कि कोई उदात्त नहीं आ जाता) इसी अधिक अनुदात्तों के प्रचय हो जाने के कारण ही इसे प्रचय सञ्ज्ञा से अभिहित किया जाता।

प्रचय हो जाने पर अनुदात्त-उदात्त के समान उच्चरित होता हुआ नीची ध्वनि से उच्चारित होने वाला स्वर अब ऊँची ध्वनि से उच्चारित होने लगता है ध्वनि के इस आधिक्य के कारण भी अनुदात्त स्वर प्रचय कहा जाता है।

स्वरित के बाद में आने वाले अनुदात्तों का 'प्रचय' स्वर हो जाता है। ऐसी अवस्था में वे अनुदात्त उदात्त के समान सुनाई पड़ते हैं चाहे वे एक हों, दो हों या बहुत हों—

**स्वरितादनुदात्तानां परेषां प्रचयः स्वरः।**
**उदात्त-श्रुतितां यान्त्येकं द्वे वा बहूनि वा॥**

प्रचय स्वर मूलतः अनुदात्त होता है। जब पूर्ववर्ती 'स्वरित-स्वर' के प्रभाव से 'अनुदात्त' अनुदात्त के समान उच्चारित न होकर उदात्त के समान उच्चारित होने लगता है तब वह प्रचय कहलाता है। अतः प्रचय कोई स्वतन्त्र स्वर नहीं है।

ऋक् प्रातिशाख्य के अनुसार उदात्त या स्वरित परे होने पर प्रचय का उच्चारण उदात्त के समान न होकर अनुदात्त के समान ही होता है। कतिपय आचार्य अन्तिम प्रचय का अनुदात्त उच्चारण करते हैं, कुछ अन्तिम दो प्रचयों का एवं कुछ प्रथम प्रचय को छोड़कर अन्य सभी प्रचयों का अनुदात्त उच्चारण करते हैं—केचित्वेकमनेकं वा नियच्छन्त्यन्तोऽक्षरम्। आ वा शेषात्।

प्रचय का यह वैशिष्ट्य है कि इसका उच्चारण उदात्तवत् एवं अनुदात्त वत् दोनों ही कि भांति परिस्थित्यनुसार होता है। प्रचय भी उदात्त की भाँति अचिन्हित रहता है। अतः ज्ञातव्य है कि स्वरित से परे अचिन्हित स्वर प्रचय होते हैं एवं अनुदात्त के बांद में या स्वरित से पूर्व विना चिह्न वाला स्वर उदात्त होता है। जिस प्रचय के तुरन्त बाद उदात्त होता है उस (उदात्त-पूर्व) प्रचय को अनुदात्त चिन्हित कर दिया जाता है। जैसे—स जनास इन्द्रः

Scanned with CamScanner

# कम्प

## (Jerk)

स्वरित के बाद में उदात्त होने पर पहले वाले उदात्ततर और बाद वाले उदात्त उच्चारणों के मध्य में अनुदात्त का उच्चारण करने में कठिनाई होना स्वाभाविक है क्योंकि स्वरित के प्रथम अंश का उदात्ततर के रूप में उच्चारण करने के तुरन्त बाद ही अनुदात्त अंश का उच्चारण करने के लिए ध्वनि को नीचे उतरना पड़ता है और परवर्ती उदात्त का उच्चारण करने के लिए ध्वनि को पुनः तुरन्त ही ऊपर चढ़ना पड़ता है ऐसी स्थिति में स्वरित के अनुदात्त अंश का उच्चारण झटके के साथ होता है इस झटके को ही कम्प कहते हैं। ऐसी स्थिति सदैव जात्यस्वरित तथा सन्धिज स्वरित के साथ होती है।

जात्योऽभिनिहितश्चैव क्षैप्रः प्रश्लिष्ट एव च।
एते स्वराः प्रकम्पन्ते यत्रोच्चस्वरितोदयाः॥

अर्थात् उदात्त या स्वरित बाद में होने पर जात्य अथवा अभिनिहित, क्षैप्र अथवा प्रश्लिष्ट स्वरित स्वर कम्प को प्राप्त होता है।

यदि यह कम्प ह्रस्व स्वरित वर्ण के अनुदात्त अंश में हो तो कम्प दिखलाने के लिए ह्रस्व स्वरित वर्ण के बाद १ संख्या को लिखते हैं उस संख्या के ऊपर स्वरित का चिह्न (।) एवं नीचे अनुदात्त का चिह्न (-) लगाया जाता है। यथा—न्य१न्यम् एवं

यदि कम्प दीर्घ स्वरित स्वर के अनुदात्त अंश में हो तो कम्प दर्शाने के लिए दीर्घस्वरित स्वर के बाद ३ लिखकर ऊपर स्वरित का एवं नीचे अनुदात्त का चिह्न लगाया जाता है। यथा—अभी३दम्।

क्रमशः चारों प्रकार के स्वरित में कम्प के उदाहरण निम्नवत् देखे जा सकते हैं—

| | | |
|---|---|---|
| १. जात्य स्वरित | तिष्यः। यथा | = तिष्यो३यथा। |
| २. अभिनिहित स्वरित | दिवः। अस्मे | = दिवो३ऽस्मे |
| ३. क्षैप्र स्वरित | नि। अन्यम् | = न्य१न्यम् |
| ४. प्रश्लिष्ट स्वरित | अभि। इदम् | = अभी३दम्। |

ये समस्त उदाहरण उदात्त परे रहने पर होने वाले कम्प के हैं। स्वरित परे रहते कम्प के उदाहरण के रूप में यः। अह्रयः = यो३ऽह्रयः को उद्धृत किया जा सकता है।

Scanned with CamScanner